महिला सशक्तिकरण में उद्यमिता की भूमिका का अध्ययन

(जयपुर में कुटीर उद्योग के संदर्भ में)

ज्योति विद्यापीठ वूमेन्स विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान) से कॉमर्स विषय में पी एच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध की

रूपरेखा

Synopsis

2019

निर्देशक

डॉ. जे.पी. मिश्रा

सहायक प्राध्यापक

शोधार्थी

रितु वैश्य

नामाकंन नम्बर – **JVR-1/19/1024**

ज्योति विद्यापीठ वूमेन्स विश्वविद्यालय, जयपुर

राजस्थान

प्रस्तावना–

महिला सशक्तिकरण के माध्यम से गरीब महिलाओं को उद्योगों से जोड़ने के लिए विकासात्मक आयोजन की प्रक्रिया अपनाई जा रही हैं। जयपुर में गरीबी के नीचे जीवन यापन करने वाली जनसंख्या का प्रतिशत बहुत ऊँचा हैं। जयपुर शहर भारत के सर्वाधिक पिछड़े हुए क्षेत्रों में से एक हैं। इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों की बहुलता हैं। कुटीर लघु उद्योगों द्वारा अप्रयुक्त संसाधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है और गरीबी के नीचे जीवन–यापन करने वाली जनसंख्या को ऊपर उठाया जा सकता हैं। बेरोजगारी व अल्पबेरोजगारी सबसे घृणित रूप में इन क्षेत्र को तबाह किये हुए हैं। इसका बड़ा समाधान कुटीर लघु उद्योगों का प्रसार हैं।

यह सामान्य विश्वास की बात हैं कि कुटीर लघु उद्योग राज्य के विभिन्न भागों में आसानी से खोले जा सकते है, जिससे कुटीर उद्योगों का विकेन्द्रीकरण एवं संतुलित आर्थिक विकास सुनिश्चित होगा। कुटीर लघु उद्योगो में अधिक पूँजी व उच्च प्रशिक्षण प्राप्त श्रमिकों की कम आवश्यकता पड़ती हैं। कुटीर लघु उद्योगों के बहुत से लाभों के बावजूद भी ऐसा माना जाता हैं, कि ये कुटीर उद्योग आर्थिक रूप से बहुत लाभदायक नहीं होते। इनके कार्य चालन की लागत तुलनात्मक रूप से अधिक होती हैं।

इन कुटीर उद्योगों में पूँजी तथा श्रम दोनों की कार्यक्षमता कम होती है, पर विभिन्न शोधकर्ताओं के विभिन्न जगहों के अध्ययन में यह प्रकाश में आया हैं कि उपरोक्त बाते सही नहीं हैं। जयपुर जिले में लघु उद्योगों के बहुआयामी अध्ययन नहीं किये गये। वर्तमान अध्ययन में कुटीर लघु उद्योगों के सही स्थिति एवं उनकी संभावित्ता के बारे में गहराई से अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

ऐसे कुटीर लघु उद्योग जिनका उत्पादन सरकारी संस्थाओं के आदेशों पर निर्भर करता है। उनके उत्पाद के मांग में तीव्र दर से वृद्धि संभव नहीं हैं, क्योंकि कुटीर लघु उद्योगों द्वारा उत्पादित माल की जनता में मांग कुछ निश्चित आर्थिक दशाओं पर निर्भर करती हैं। कुटीर लघु उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के बाजार में वृद्धि के लिये उत्पाद के मदों में परिवर्तन आवश्यक हैं। इंजीनियरिंग एवं तत्संबंधी उद्योगों को छोड़कर और किसी भी कुटीर उद्योग में वाराणसी में सहायक उद्योगों का विकास नहीं हो पाया हैं। सहायक कुटीर उद्योगों के न होने से बड़े उद्योग अपनी आवश्यकता की वस्तुऐं क्षेत्र के बाहर से लेते है। सहायक कुटीर उद्योगों को विकास कुटीर लघु उद्योगों का उत्पादन में निरंतरता को बढ़ायेगा क्योंकि सहायक उद्योग अपनी आवश्यकता की वस्तुऐं लघु उद्योगों से ही प्राप्त करती हैं।

विभिन्न चरों के उत्पादन पर प्रभाव के अध्ययन में यह पाया गया हैं कि पूँजी का उत्पादन पर बहुत ही कम प्रभाव पड़ा। स्थिर पूँजी पर हुए विनियोग का ठीक से उपयोग नहीं हो पा रहा हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता हैं कि कुटीर लघु उद्योगों में क्षमता का कम उपयोग हो रहा हैं। यदि पूँजी को कम कर दिया जाये तो शायद इसका उत्पादन पर कोई प्रभाव न हो। श्रम इंजीनियरिंग एवं तत्संबंधित उद्योगों में सार्थक रहा हैं, पर ज्यादातर दशाओं में यह बहुत कम रहा, जो यह प्रदर्शित कर रहा हैं कि कुटीर लघु उद्योगों में श्रम को अतिरोजगार प्राप्त हैं। अन्य कुटीर उद्योगों को छोड़कर लगभग सभी उद्योगों में कच्चामाल लघु उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि हेतु महत्वपूर्ण चर हैं।

कच्चे माल की आपूर्ति में बाधा कुटीर लघु उद्योगों के उत्पादन को बुरी तरह प्रभावित करती हैं। कुटीर लघु उद्योगों की वित्तीय स्थिति अत्यंत दयनीय हैं, जिससे कभी–कभी ये अभ्यंशित कच्चे माल का भी उपयोग नहीं कर पाते, केवल कुछ इकाईयाँ ही अभ्यंशित कच्चे माल का उपयोग कर पाती हैं। बहुत सी इकाईयाँ इस सुविधा को अस्वीकार कर देती हैं। कच्चे माल के अभ्यंश के वितरण में भी बहुत से कुप्रबंध हैं, जो कुटीर लघु उद्योग के कार्यचालन व अन्तः लाभ प्रदत्ता को बहुत बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

विभिन्न स्थानों पर कच्चे माल का भण्डारण करके भी इनकी आपूर्ति को नियमित किया जा सकता हैं। विकल्प रूप में एक सुझाव यह हो सकता है कि उद्योगपतियों के बीच सहकारिता का निर्माण हो जो कच्चे माल की समस्या को कुछ हद तक शायद

दूर कर सके। अभ्यंश एवं लाइसेंस हेतु उद्योग निर्देशालय में बार–बार दौड़ने से जो समय व ऊँर्जा की बर्बादी होती हैं, उसका भी उद्योगपतियों के आत्मविश्वास पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता हैं। अभ्यंश वितरण की वर्तमान प्रणाली की जगह कच्चे माल की सहकारी खरीद इसकी समस्या को कम कर सकती हैं।

कुटीर उद्योगों की पूँजी संरचना में यह देखा गया हैं कि इसमें विभिन्न वर्षो में कार्यशील पूँजी का कुल पूँजी से अनुपात 40 प्रतिशत हैं तथा स्थिर पूँजी का कुल पूँजी से अनुपात 60 प्रतिशत हैं। कार्यशील पूँजी का अनुपात वस्त्र उद्योगो, इंजीनियरिंग एवं तत्संबंधी उद्योगों तथा भवन निर्माण सामग्री उद्योगों में अधिक हैं। विभिन्न उद्योगों में कार्यशील पूँजी की गणना उनके वास्तविक क्षमता उपयोग के आधार पर की गयी हैं। यदि उत्पादन पूर्ण क्षमता उपयोग पर हो तो कुल पूँजी संरचना में कार्यशील पूँजी का अधिक अनुपात यह बताता हैं, कि इन उद्योगों को प्रारंभ करना इनके कार्यचालन से आसान हैं।

यह बहुत ही आवश्यक हैं कि कुटीर लघु उद्योगों को अत्याधिक मात्रा में संस्थागत वित्त की आपूर्ति करायी जाये। वाणिज्यिक बैंक जो कुल आपूर्ति वित्त का लगभग 41 प्रतिशत भाग प्रदान करते हैं, वह बहुत कठिनाई से कुटीर उद्योगों की आवश्यकता हेतु पूरा पड़ता हैं। नीची विनियोग स्तर की इकाईयां जमानत के अभाव में वाणिज्यिक बैंकों से ऋण लेने में असमर्थ रहती हैं। उनकी कार्यशील पूँजी हेतु ऋणों के आवेदन को अनार्थिक तथा ऋण वापसी में असमर्थ कहकर निरस्त कर दिया जाता है। ऐसा अनुभव किया गया हैं कि कुटीर लघु औद्योगिक इकाईयों को उनके कार्यचालन के तत्कालिक स्थिति के आधार पर साख हेतु अयोग्य माना जाता है। बैंकों को ऋण के अनुमोदन में और उदार तरीका नहीं अपनाता। वर्तमान में बहुत से कुटीर लघु उद्योग कर्ज लेने के बाद अपने को बीमार घोषित करने में जरा सी विलम्ब नहीं करते। बहुत से कुटीर लघु उद्योग इस क्षेत्र में केवल सुविधाओं की ही वजह से हैं। कर्ज के प्रार्थना पत्रों को बहु बारीकी से जांचने की आवश्यकता हैं। कर्ज के अनुमोदन के समय यह बहुत ही आवश्यक हैं कि इकाईयों के साख की आवश्यकता को बैंक कर्मचारियों द्वारा बहुत बारीकी से देखा जाये तथा यह सुनिश्चित किया जाय कि जमानत के अभाव में इकाई की वित्तीय आवश्यकता प्रभावित न हो तथा साथ ही बैंकों का हित भी सुरक्षित रहे।

कुटीर उद्योगों में उत्पादित रोजगार दक्ष व अदक्ष दोनों तरह का हैं। कुल रोजगार में दक्ष श्रमिकों का हिस्सा सभी उद्योगों में अधिक रहा, जो प्रशिक्षण केन्द्रों की लघु उद्योगों के संवर्धन में भूमिका को बताता हैं। कुटीर लघु उद्योगों में लगे श्रमिकों में भाड़े के श्रमिकों का प्रतिशत सबसे अधिक हैं, तथा स्वामी श्रमिकों का प्रतिशत सबसे कम हैं। उद्योगों का उत्पादन ज्यादातर आदेशों पर निर्भर करता है ये आदेश वर्ष भर निरंतर नहीं प्राप्त होते। अंतः इनमें रोजगार सृजन कभी कम तो कभी अधिक होता हैं। रोजगार सृजन भिन्न–भिन्न उद्योगों में भिन्न–भिन्न होता हैं।

केवल सरकारी खरीद ही कुटीर लघु उद्योगों के विपणन की समस्या का समाधान नहीं कर सकती क्योंकि अधिकांश लघु उद्योग ऐसी वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। जिनकी सरकारी संस्थाओं को आवश्यकता नहीं होती। विपणन के फैलाव में माल की गुणवत्ता और उनका आकर्षक आकार बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं। कुटीर लघु उद्योगों में गुणवत्ता की तरफ आयी चेतना तथा आकर्षक पैकिंग उनके बाजार को फैला सकती हैं। कुटीर लघु उद्योगों के संवर्धन में सरकार बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। सरकार लघु उद्योगों द्वारा उत्पादित माल के प्रसार हेतु विभिन्न समयों एवं विभिन्न जगहों पर व्यापार मेलों का आयोजन करती हैं। कुटीर लघु उद्योगों में सहकारिता का विकास भी इसके विपणन की समस्या को कुछ हद तक दूर कर सकता हैं। कुटीर लघु उद्योगों के विपणन की रणनीति ऐसी हो जिससे उनकी बिक्री बढ़ सके, वे उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को समझ सके। एवं अपना उत्पादन उसी के अनुरूप कर सके। दूसरे विपणन की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिसमें उपभोक्ताओं को अधिमान्यता मिले। व्यावसायिक, गतिविधियाँ ऐसी हो जिससे उपभोक्ताओं की आवश्यकता को पहचाना जा सके, तथा उसको पूरा किया जा सकते।

विभिन्न कुटीर लघु उद्योगों के उत्पादन की बिक्री में अंत इकाई प्रतियोगिता सबसे बाधक तत्व हैं। बेरोजगार युवक बेरोजगारी के दर्द से इतने पीड़ित रहते है कि बिना उद्योग के भविष्य की संभावनाओं को समझे, एक इकाई खोल लेते हैं। यद्यपि सरकारी मशीनरी इस बात को सदैव प्रयास करती है कि स्थापित इकाईयां अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सकें, फिर भी कुछ क्षेत्रों में लघु उद्योगों का इतना संघनन हो गया कि इनमें गला काट प्रतियोगिता हो रही हैं।

केवल उद्योगों की स्थापना ही औद्योगीकरण में सहायक नहीं होगी, जब तक की स्थापना के बाद उनका कार्यचालन सुनिश्चित न हो। कार्यचालन के अभाव में शुरू की गयी इकाईयाँ कुछ ही समय बाद बीमार हो जाती हैं। इकाईयों की नियमित जांच अत्यंत आवश्यक हैं, जिससे यह जाना जा सके कि इकाईयाँ कैसी चल रही हैं। यदि वे उस गति से नही ंचल रही हैं, तो वे उस गति का पता लगाया जाये, तथा उसके समाधान का उपाय खोजा जाय। नियमित जांच के साथ–साथ उद्योगों के उत्पादन गुणवत्ता नियंत्रण पर भी ध्यान दिया जाय जिससे प्रतियोगी बाजार में उद्योगों के लिए समस्या न आये।

कुटीर लघु उद्योगों में निष्क्रिय क्षमता के लिए बहुत से कारण उत्तरदायी है, जिस गति से चलनी चाहिए तो उत्पन्न व्यवधान कासर्वेक्षित इकाईयों में 20 प्रतिशत इकाईयों ने निष्क्रिय क्षमता हेतु केवल एक कारण बताया, तथा 80 प्रतिशत इकाईयों ने एक से अधिक कारण बताये। निष्क्रिय क्षमता हेतु सबसे महत्वपूर्ण एकत्र कारण तत्व मांग की कमी रही है। बड़े उद्योगों से प्रतिस्पर्धा, मौसमी उच्चावचन हीन गुणवत्ता इत्यादि ऐसे तत्व है जो मांग को कम करती है। लघु क्षेत्र में वर्तमान उत्पादन क्षमता और उत्पाद की भविष्य की मांग के बारे में न तो सरकार के पास, और नहीं किसी व्यापारिक संस्था के पास कोई सूचना हैं। संगत सूचनाओं के अभाव में कभी–कभी किसी–किसी उद्योग में अतिरिक्त संकेन्द्रिण हो जाता हैं, जो अन्तः मांग की कमी को जन्म देता हैं। इस समस्या का समाधान सरकार द्वारा एक निश्चित समय अंतराल पर बाजार की संभावनाओं के बारे में सूचनाओं का प्रकाशन करना होगा। इसके अतिरिक्त उद्योगपतियों द्वारा उत्पाद की आकर्षकता में वृद्धि करके भी मांग को बढ़ाया जा सकता है। इस हेतु गुणवत्ता पर ध्यान तथा रंग पैकिंग एवं प्रचार को अपनाया जा सकता है।

सही समय पर सही गुणवत्ता का सस्ता कच्चा माल उपलब्ध न होना भी उद्योगों के निष्क्रिय क्षमता हेतु उत्तरदायी है। कच्चे माल के अभाव में लघु उद्योग पूरे वर्ष भर नहीं चल पाते। सरकार की अभ्यंश के आधार पर कच्चे माल की आपूर्ति के तरीके में बहुत से दोष हैं। इनमें बहुत ही अनियमितितायें हैं तथा अभ्यंशित कच्चा माल भी मात्रा में कम पड़ता हैं। कुछ कच्चे माल जैसे–रेशम, स्टील, ब्रास, कॉपर, रसायन इत्यादि के उपलब्धि की बहुत ही समस्या हैं। जो उद्योग दुर्लभ कच्चे माल पर आधारित होते हैं, कच्चे माल की समयबद्ध आपूर्ति हेतु विभिन्न क्षेत्रों में क़च्चा माल बैंक बनाने पर बल दिया जाता हैं। ये बैंक ऐसे हो जिनके पास कच्चे माल का पर्याप्त भण्डार हो, तथा इन बैंकों से कच्चा माल कर्ज के रूप में लिया जा सके, जिसे बाद में सरकारी अभ्यंश से प्राप्त होने पर लौटाया जा सके। सरकारी क्रय समितियों का निर्माण भी इस संबंध में मददगार होगा।

कुटीर लघु एवं कुटीर औद्योगिक क्षेत्र भारतीय अर्थव्यवस्था के एक मजबूत और गतिशील क्षेत्र के रूप में उभरा हैं, जो कुल औद्योगिक उत्पादन के लगभग 40 प्रतिशत तथा राष्ट्रीय निर्यात के 34 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता हैं। वर्तमान में 250 लाख से अधिक व्यक्तियों को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान कर रहा हैं। इस कारण जीविकापार्जन की प्राथमिक आवश्यकता मानकर किये गये शासकीय प्रयासों के फलस्वरूप शासकीय अभिकरणों एवं विभागों की स्थापना की गई, जिससे कुटीर एवं लघु उद्योगों को प्रोत्साहित किया जा सकें। इसके लिये 1977 में भारत ने औद्योगिकीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाया। इस नीति के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे कस्बों में कुटीर और लघु उद्योग केन्द्र की अवधारणा सामने लाई गई ताकि एक छत के नीचे कुटीर और लघु उद्योग को सभी आर्थिक सेवायें उपलब्ध कराई जा सके। इसी परिकल्पना को साकार करते हुए 1978 में एकल खिड़की योजना लागू होने के बाद नया औद्योगिक वातावरण निर्मित हुआ। जिला उद्योग केन्द्रों के माध्यम से औद्योगिक लक्ष्य को पूरा करने के लिये न्यूनतम पूँजी से औद्योगिक इकाईयों की स्थापना क्षेत्रीय संसाधनों एवं उपलब्ध कच्चे माल का परिपूर्ण

दोहन कर औद्योगिक उत्पादन में अभिवृद्धि करता रहा हैं। 1980 की औद्योगिक नीति में विकास के लिये सहायता देने और छोटी इकाईयाँ बनने का मार्ग प्रशस्त किया, जबकि 1980 की औद्योगिक नीति में निर्यात तथा ग्रामीण रोजगार सृजन करने पर बल दिया गया हैं।

उद्योग क्षेत्र की परिभाषा (विकास और विनिमय) अधिनियम 1951 के अंतर्गत आती हैं। क्षेत्र को संयंत्र और मशीनरी में निवेश सीमा (मूल लागत) की शर्तो के अनुसार एक निर्धारित मूल्य तक परिभाषित किया गया हैं। इसमें उद्योगों का व्यापक परिवेश शामिल हैं, जो कि सूक्ष्म और ग्रामीण उद्योगों तक फैला हुआ हैं और जिसमें आधुनिक लघु उद्योगों में एक ओर तो प्रारम्भिक प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया गया हैं और दूसरी ओर परिष्कृत प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया गया हैं।

व्यवहार रूप में कुटीर लघु उद्योग क्षेत्र एक अवशिष्ट क्षेत्र के रूप में कार्य कर रहा है, क्योंकि वे सभी इकाईयाँ जो एक निर्धारित निवेश सीमा में आती हैं, और किसी विशेष उपक्षेत्र में मान्यता प्राप्त नहीं हैं, इसमें शामिल की गई हैं। क्रम संख्या 2 से 8 तक सूची बद्ध किए गए उद्योगों को योजना आयोग द्वारा इसके अतिरिक्त यह क्षेत्र में व्यापक सीमा की परिकल्पना में लगे हुए क्षेत्रीय प्रभावों की शर्तो की संभावना में बँधा हुआ हैं। यह ग्रामों और छोटे उद्योग क्षेत्र का हिस्सा हैं, जिसमें लघु उद्योग और परियोजना उद्योग शामिल हैं। क्षेत्रीय प्रभावों के साथ–साथ प्रशासनिक और विकासशील प्रारूप गठित किया गया हैं और उसे नीचे दिखाया गया हैं–

लघु उद्योग–

24–12–1999 से ग्रामीण लघु उद्योग की संज्ञा दी गई हैं। लघु उद्योग और बिजली करघों को आधुनिक खण्ड माना जाता हैं, जबकि ग्रामीण उद्योग, हथकरघे, रेशम, उत्पादन, हस्तशिल्प और कॉयर (जूट) को पारम्परिक उद्योगों की संज्ञा दी गई हैं।

1. वर्तमान परिभाषाएँ–

(क) किसी भी औद्योगिक उपक्रम में जिसमें संयंत्र और मशीनरी से सम्बन्धित परिसंपत्तियों में किया गया निवेश चाहे वह स्वामित्व वाली शर्तो पर हो अथवा लीज पर हायर–परचेज एक करोड़ रूपये से अधिक न हो।

(ख) सहायक औद्योगिक उपक्रम।

ऐसा सहायक औजारों के विनिर्माण अथवा उत्पादन में लगा हैं अथवा उसके इन कामों में लगने का प्रस्ताव हैं अथवा सेवाएं उपलब्ध करा रहा हैं और आपूर्ति कर रहा हैं अथवा आपूर्तिकर्ता या करने का प्रस्ताव हैं अथवा एक या अधिक अन्य औद्योगिक उपक्रमों को उत्पादन अथवा सेवाओं का जैसा भी पक्ष हो कम से कम 50 प्रतिशत की आपूर्ति करता हैं और जिसका संयंत्र और मशीनरी में नियत परिसंपत्तियों में, चाहे वे स्वामित्व की शर्तो पर हो अथवा पट्टे पर हो अथवा किराया खरीद पर हो में निवेश 3 करोड़ रूपये से अधिक न हो।

कुटीर एवं लघु उद्योगों को जीविकोपार्जन की प्राथमिक आवश्यकता मानकर किये गये शासकीय प्रयासों के फलस्वरूप ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में कई शासकीय अभिकरणों की स्थापना की गई, जिससे कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित कर स्वावलंबी बनाया जा सके। इन प्रयासों में ग्रामीण सहकारी समितियों तथा औद्योगिक विकास केन्द्रों की भूमिका निर्णायक रही हैं।

जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र जिला स्तर पर औद्योगिक इकाईयों की स्थापना और प्रोत्साहन हेतु अनेक कार्य करते हैं। इनमें प्रमुख रूप से सुविधायें, तकनीकी एवं सामान्य सेवायें प्रदान करता हैं, जिसमें सेवा, सुविधाये, कच्चे माल की व्यवस्था, विपणन तथा विस्तार हेतु साख सुविधायें आदि सम्मिलित हैं। शासन की विभिन्न योजनायें एवं कार्य कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं।

कौशल विकास कार्यक्रम का मूल उद्देश्य लघु एवं कुटीर उद्योगों में लगे कुशल कामगारों को प्रशिक्षण देना उन्हें उत्पादन के बेहतर और संशोधित कौशल की जानकारी देना हैं।

प्रबंध विकास कार्यक्रम के अंतर्गत बाजार में बेहतर लाभ और पर्याप्त मात्रा में हिस्सेदारी प्राप्त करने के लिये लघु उद्यमियों की सहायता के लिये नई प्रबंध तकनीकों और प्रक्रियाओं में आधुनिकीकरण की जानकारी देना हैं।

पर्यावरण नियंत्रण का उद्देश्य स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के संवर्द्धन विकास और उन्हें अपनाये जाने की योजना हैं, जिसमें कूडे–करकट के पुनः उपयोग की प्रक्रिया अपनाना शामिल हैं।

इस प्रकार जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र प्रत्यक्ष रूप से उद्योग निदेशालयों के अंतर्गत उनके क्षेत्रीय अभिकरण के रूप में कार्य करती हैं, जो लघु इकाईयों के पंजीकरण की प्रक्रिया को सरल एवं मजबुत करता हैं।

जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्रों के संचालन प्रशासन एवं नियंत्रण का दायित्व राज्य शासन के हाथों में होता हैं। संगठन संरचना के आधार पर जिला उद्योग एवं व्यापार केन्द्र में शीर्षस्थ महाप्रबंधक की नियुक्ति की जाती हैं, जिसका स्तर संयुक्त निदेशक के समान होता हैं।[5]

कुटीर लघु उद्योग संगठन से जुड़े व्यक्तियों द्वारा जिला उद्योग केन्द्र की व्याख्या करते हुए कहा कि– ''इसे जिला स्तर पर उद्यमियों को लघु, अति लघु और ग्रामीण उद्योग स्थापित करने के बारे में एक ही स्थान पर समस्त सेवाएं और सुविधाएं उपलब्ध कराने वाली संस्था कहां गया।'' जिला उद्योग केन्द्र का अर्थ और अधिक स्पष्ट रूप से बताते हुए बसंत देसाई ने व्याख्या की हैं कि ''जिला उद्योग केन्द्र ऐसा अभिकरण माना गया हैं, जिससे उद्योगों को उपलब्ध सुविधाएं एक ही स्थान पर प्राप्त होती हैं तथा ग्रामीण उद्योगों का केन्द्रीयकरण संभव होता हैं।'' स्पष्ट हैं कि जिला उद्योग केन्द्र नई औद्योगिक इकाईयों की स्थापना हेतु विभिन्न प्रकार की सहायता एवं सुविधाएं उपलब्ध कराने वाली एक महत्वपूर्ण केन्द्रीय संस्था हैं। इस केन्द्र से उद्योगों वित्त निगम, खादी एवं ग्रामोद्योग मण्डल, राज्य विद्युत मण्डल आदि का संबंध स्थापित किया गया हैं ताकि लघु उद्यमियों को विभिन्न संस्थाओं से मिलने वाली समस्त सुविधायें इन केन्द्रों के माध्यम से सुलभ कराई जा सकें। वर्णित अवधारणाओं के आधार पर जिला केन्द्र की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएं हैं।

- जिला उद्योग केन्द्र राज्य सरकार द्वारा स्थापित केन्द्रीय संस्था हैं। इन केन्द्रों में एक ही स्थान पर विभिन्न विभागों एवं संस्थाओं का केन्द्रीकरण होता हैं, अतः इसे एक खिड़की की विचारधारा भी कहते हैं।
- यह एक जिला स्तरीय संस्था हैं। भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के लिये लगभग प्रत्येंक जिले में इन केन्द्रों की स्थापना की गयी हैं।
- इस कार्यक्रम के अंतर्गत केन्द्रीय शासन, राज्य शासन को जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना हेतु प्रारम्भ से ही निश्चित मात्रा में वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती हैं। इन केन्द्रों की स्थापना के पश्चात् इनके सफल संचालन एवं प्रशासनिक नियंत्रण का उत्तरदायित्व राज्य शासन का होता हैं।
- उद्योग प्रारंभ करने के लिये विभिन्न विभागों, संगठनों, उद्योग निदेशालय, अधिकोष एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं आदि के मध्य संपर्क सूत्र का कार्य कर उनमें समन्वय स्थापित करते हैं।
- लघु उद्योगों के सम्वर्द्धन एवं उद्योगों के विकास हेंतु नये उद्यमियों को सहायता प्रदान करने का प्रमुख कार्य जिला उद्योग केन्द्र का ही हैं।
- कृषि प्रधान ग्रामीण क्षेत्रों को उद्योग प्रधान औद्योगिक क्षेत्रों के रूप में भी विकसित करने के लिये जिला उद्योग केन्द्र की एक परिवर्तनकारी प्रतिनिधि संस्था के रूप में उदित हुई।

नियोजित शहरी विकास को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यक होने पर शहरी क्षेत्र के असंगठित सूक्ष्म उद्योगों, हस्तशिल्प एवं सेवा इकाईयों के लिए सर्वसुविधायुक्त आधुनिक शहरी बहुद्देशीय कॉम्पलेक्स की स्थापना शहरों में उपयुक्त शासकीय भूमि का चयन कर, विभागीय निगमों के माध्यम से की जाएगी।

नवीन/विस्तारित औद्योगिक क्षेत्रों, जहां 500 एकड़ अथवा अधिक भूमि विकसित की जानी हैं, वे औद्योगिक श्रमिकों एवं कर्मचारियों के आवास हेतु कुल भूमि की अधिकतम 10 प्रतिशत भूमि पृथक जोन बनाकर आरक्षित की जाएगी।

आधुनिक कुटीर लघु उद्योग काफी पूँजी प्रधान हैं, अर्थात् वे बड़े पैमाने के उद्योगों की तुलना में प्रति इकाई पूँजी अधिक रोजगार का सृजन नहीं करते। उन्होंने यह भी निष्कर्ष निकाला कि लघु उद्योग बड़े उद्योगों की तुलना में श्रमिकों को कम वेतन देते हैं और अक्सर बड़े शहरों में केन्द्रित होते हैं। उनके अनुसार लघु उद्योग बड़े उद्योगों की तुलना में कम दक्ष हैं, इसलिए उन्हें बड़े उद्योगों की अपेक्षा कोई प्राथमिकता देने की आवश्यकता नहीं हैं। इसी प्रकार के निष्कर्ष कुछ अन्य अर्थशास्त्रियों के अध्ययन से भी प्राप्त हैं। इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण अध्ययन विश्वनाथ गोल्डार का हैं, जिसमें 1976–1977 के लिए 37 उद्योगों को लिया गया। गोल्डार ने सापेक्षित श्रम उत्पादकता, सापेक्षित पूँजी उत्पादकता तथा सापेक्षित कुल कारक उत्पादकता (जिसे सापेक्षिक दक्षता भी कहा जा सकता है) की गणना की ओर पाया है कि बड़े उद्योगों की तुलना में लघु उद्योगों में कम श्रम उत्पादकता, उच्चपूँजी उत्पादकता, कम पूँजी गहनता तथा कम कुल साधन उत्पादकता हैं। उन्होंने निकाला कि आधुनिक लघु क्षेत्र बहुत से उद्योगों में बड़े क्षेत्र की तुलना में कम कार्यकुशल हैं। लघु व कुटीर उद्योगों के समर्थन में एक महत्वपूर्ण तर्क यह दिया जाता हैं कि उनकी सहायता से राष्ट्रीय आय का अधिक बेहतर न्यायोचित वितरण हो सकता हैं। ऐसा दो कारणों से हैं : एक तो लघु उद्योगों का स्वामित्व बड़े उद्योगों की तुलना में आर्थिक विस्तृत व छितरा हुआ हैं तथा दूसरे, लघु उद्योगों की रोजगार सृजन की सामर्थ बड़े उद्योगों की तुलना में अधिक हैं। धर व लाइडाल के अनुसार यह तर्क गलत हैं, उनके अनुसार लघु उद्योगों के श्रमिक प्रायः असंगठित होते हैं और अपने अधिकारों की रक्षा नहीं कर सकते। इसलिए इन श्रमिकों को कम मजदूरी देते हैं। भारत में लघु उद्योगों में मजदूरी की दर बड़े उद्योगों में मजदूरी की दर से आधी हैं। इंग्लैण्ड, अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी, जापान तथा भारत सभी देशो में लघु उद्योग आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने में असमर्थ रहें।

प्रस्तुत शोध में अध्ययन में महिला सशक्तिकरण में उद्दीमता की भूमिका का अध्ययन किया जायेगा। इस अध्ययन में जयपुर जिले में महिलाओं के द्वारा स्थापित किये गये कुटीर उद्योग, जिससे की उनकी रोजी रोटी, आसानी से चलती हैं, वे उनका पारिवारिक जीवन भी व्यवस्थित चलता रहे। शोधार्थी के द्वारा इस शोध में यह जानने का प्रयास भी किया जायेगा कि जयपुर जिले में कितने परिवारों में कुटीर उद्योग स्थापित हुये हैं, और कितनी मात्रा में स्थापित हैं एवं कितनी प्रतिशत महिलाओं के द्वारा कुटीर उद्योगों का संचालन किया जा रहा हैं।

जयपुर जिले में महिलाओं की उन्नति के बावजूद आज भी महिला सशक्तिकरण की तस्वीर वैसी उजली नहीं है जैसी होनी चाहिये। जयपुर जिले की अधिकांश महिलाएं अशिक्षा, दरिद्रता रूढ़िवादिता के साथ ही पुरूष उत्पीड़न का आज भी शिकार है। गांव में, पिछड़े इलाकों में तथा समाज के पिछड़े वर्गो में उनकी स्थिति आज भी शोषण की दृष्टि से गंभीर है। केवल कतिपय वर्ग की, क्षेत्र की शिक्षित महिलाओं के उच्च पदों पर आसीन हो जाने अथवा शहरी क्षेत्र में स्थिति सुधरने को महिलाओं के सशक्तिकरण का प्रमाण नहीं माना जा सकता।

गैर कृषि क्षेत्र की लघु एवं कुटीर उद्योग की महिला श्रमिक भी शोषण का दोहरा बोझा ढो रही है। सर्वोच्च पदों पर जो नारियाँ आसीन हो रही है वे पुरूषों की तुलना में नगण्य है। भारतीय प्रशासनिक सेवाओं में जहां 4973 पुरूष है वही महिलाएं केवल 411 है। 21 वी सदी में नारी द्वारा सशक्त भूमिका तभी निभाई जा सकेगी जब मन, वचन, कर्म से इन बुराईयों को जड़मूल से समाप्त करने के लिए समाज कटिबद्ध होगा। पश्चिमी संस्कृति के मीडिया द्वारा भारत में फैलाव यद्यपि नारी मुक्ति की दिशा में एक योगदान

के रूप में रेखांकित किया जा रहा है परंतु एक तो यह शहरी क्षेत्र एवं उच्च शिक्षित वर्गो तक ही सीमित है, दूसरी और यह संस्कृति के स्थान पर अपसंस्कृति ही सिद्ध हो रही है।

संबंधित साहित्य का पुनर्रावलोकन –

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीयकरण एवं कुटीर लघु उद्योग के विभिन्न पक्षों पर कई अध्ययन किए गए है। यहाँ ऐसे संबंधित साहित्यों का अध्ययन किया जाना आवश्यक होगा जो इस साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक है।

1. सुश्री श्वेता मिश्रा (1997) प्रकाशित लघु एवं कुटीर उद्योग महिलाओं की सहभागिता। इस साहित्य में महिलाओं के अधिकांशों का विस्तार से अध्ययन किया गया है एवं कुटीर उद्योग से महिलाओं की क्या भूमिका रहेगी इसका भी विस्तार से वर्णन किया गया है।
2. सुशीला कौशिक (1993) ने महिला एवं पंचायती राज पर एक अध्ययन प्रस्तुत किया है। यह विश्लेषणात्मक अध्ययन मेरे शोध विषय के लिए एक महत्वपूर्ण साहित्य है। इस अध्ययन में स्थानीय पंचायतराज व्यवस्था का चित्रण करते हुए इन संस्थाओं की वित्तीय, प्रशासनिक एवं राजनीतिक समस्याओं का विश्लेषण भी किया है। इन्होंने पंचायतीराज के तीनों स्तरों का वर्णन करते हुए उनके कार्यो का उल्लेख किया है।
3. इकबाल नारायण(1973)ने अपनी पुस्तक ''कुटीर उद्योग से महिलाओं'' में पंचायती राज व्यवस्था का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया है। इसमें पंचायती राज की त्रिस्तरीय संरचना एवं प्रक्रियागत प्रकार्यो पर प्रकाश डाला है। ग्रामीण विकास के प्रशासनिक तंत्र यथा जिलाधीश, खण्ड विकास अधिकारी, प्रसार अधिकारी तथा ग्राम स्तरीय कार्यकर्ताओं के कर्तव्य एवं कार्यो का उल्लेख किया है।
4. देवेन्द्र राज मेहता एवं सतीश के बन्ना (एडीटेड) (1981) उनकी पुस्तक ''एडमिनिस्ट्रेशन फॉर रूरल डवलपमेंट'' में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में प्रशासनिक तंत्र का विस्तृत अध्ययन किया है। इसमें अनेक विद्वानों के लेखों का संकलन है, जिसमें रजनी कोठारी ने ग्रामीण विकास के मुद्दों एवं रूपरेखा पर प्रकाश डाला है। मोहन मुखर्जी ने आधारभूत नियोजन पर बल दिया है। के.वी. सुन्दरम ने विकास प्रक्रिया में ग्रामीण व शहरी संबंधों को दर्शाया है, एस.पी.सिंह ने कृषि विकास पर, राकेश हूजा ने भारत में माइक्रोलेवल क्रेडिट नियोजन, पी.आर.दुभाषी ने भारत में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के प्रशासनिक तथा संगठनात्मक पहलुओं पर तथा टी.एन.चतुर्वेदी ने ग्रामीण विकास के विविध आयामों को उल्लेखित किया है।
5. होशियार सिंह(1985) ने अपनी पुस्तक ''पंचायती राज एडमिनिस्ट्रेशन इन हरियाणा'' में संरचनात्मक ढाँचा, कार्मिक, वित्त, नेतृत्व और नियंत्रण प्रक्रिया की पंचायती राज के संदर्भ में विस्तृत व्याख्या की है। यह हरियाणा में 73 वें संविधान संशोधन अधिनियम से पूर्व पंचायत राज व्यवस्था से संबंधित है।
6. प्रद्युम कुमार तथा बी.एल. फडिया(सम्पादित), (1986) ने ''ग्रामीण विकास द्विग्बोध की तलाश'' में ग्रामीण विकास के विविध पहलुओं पर व्यवहारिक दृष्टिकोण से प्रकाश डाला है तथा इसमें ग्रामीण विकास के नये विकल्प खोजने का प्रयाास किया गया है। ग्रामीण विकास के संदर्भ में नीतियों एवं कार्यक्रमों पर विस्तृत चर्चा की है, साथ ही संस्थागत आधार पर पदाधिकारियों के दायित्वों से संबंधित लेखों का संकलन किया गया है।
7. राकेश आहुजा(1987) ने ''एडमिनिस्ट्रेटिव इनोवेशन्स इन रूरल डवलपमेन्ट'' में विकास प्रशासन में सरकार की भूमिका को इंगित किया है। इसमें राजस्थान में संचालित विविध ग्रामीण विकास परियोजनाओं का उल्लेख किया गया है। इसके प्रथम भाग में परिचयात्मक, द्वितीय में भारत में ग्रामीण विकास की समीक्षा, तृतीय में लाभग्राही कार्यक्रमों का वर्णन किया गया है।

8. बी.पी.एस. भदौरिया एवं वी.वी. दुबे ने अपनी पुस्तक ''पंचायतीराज एंड रूरल डेवलपमेंट(1989)'' में स्थानीय सरकारों विशेषकर पंचायतराज व्यवस्था की आवश्यकता एवं सार्थकता पर केन्द्रित एक अध्ययन किया है। अपने अध्ययन में उन्होंने उत्तरप्रदेश एवं आंध्रप्रदेश की ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं में वित्त की समस्याओं एवं संभावनाओं को रेखांकित करते हुए बताया है कि इन संस्थाओं की असफलता में अन्य तत्वों के अतिरिक्त मुख्य तत्व उन्हें आवंटित धन की अपर्याप्तता है। उनके अनुसार वास्तविकता में वित्तीय रूप में शक्तिशाली पंचायतें ही अपनी क्षमता को सुनिश्चित कर सकती है एवं स्थानीय विकास की दिशा को तीव्रता प्रदान कर सकती है ओर अपने अध्ययन में उत्तरप्रदेश व आंध्रप्रदेश की ग्रामीण स्थानीय स्वशासन संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया है।
9. शकुन्तला शर्मा ने अपनी पुस्तक ''ग्रासरूट पॉलिटिक्स एण्ड पंचायती राज(1994)'' में प्राचीन काल से लेकर आज तक की आधार स्तरीय राजनीति का विवेचन करते हुए स्थानीय नेताओं की राजनीति, कार्यक्षेत्र, क्षमताएँ और उच्च नेतृत्व से संबंधों का वर्णन किया है। ग्रामीण स्थानीय राजनीतिक एवं भारत में पंचायतराज का विस्तृत विश्लेषण किया है। अपने अध्ययन में उन्होंने पंचायतों में नेतृत्व निर्वाचन एवं मतदाता व्यवहार के संदर्भ में पूर्व से लेकर वर्तमान तक ग्रामीण स्वशासन के एवं मतदाता व्यवहार के संदर्भ में पूर्व से लेकर वर्तमान तक ग्रामीण स्वशासन के विकास का अध्ययन किया है। अपने अध्ययन में उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में जाति वर्ग विकास का अध्ययन किया है। अपने अध्ययन में उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में जाति वर्ग और शक्ति के मध्य अन्तः क्रिया के विशिष्ट लक्षणों को स्पष्ट करते हुए स्थानीय लोकतंत्र एवं राजनीति का पंचायत की कार्य प्रणाली पर प्रभाव, ग्रामीण शक्ति संरचना के प्रतिरूप एवं ग्रामीण नेतृत्व के उच्च राजनीतिक नेतृत्व से संबंधों को भी विश्लेषित किया है।
10. मेहता रिपोर्ट के पश्चात् तीनों राज्यों की पंचायतीराज व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन किया है। इसमें 1964, 1972, 1974, के संवैधानिक संशोधन विधेयकों की आलोचनात्मक तुलना भी की गई है और साथ में भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के भविष्य की निश्चित समस्याओं तथा सुधारों के संदर्भ मे चर्चा की।
11. पी.सी.माथुर व राकेश हूजा(1996) ने ''प्रोजेक्ट्स प्लानिंग एण्ड डवलपमेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन'' में भारत को विश्व के देशों में से प्रशासनिक दृष्टि से सुव्यवस्थित बताया है। इसके प्रथम भाग में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, द्वितीय भाग में अवधारणात्मक पहलू, तृतीय भाग में नियोजन और परियोजना निर्माण तथा अन्तिम भाग में विकास प्रशासन और परियोजना के क्रियान्वयन को शामिल किया गया है।
12. प्रेमनारायण पाण्डेय ने अपनी पुस्तक ''ग्रामीण विकास एवं संरचनात्मक परिवर्तन(2000)'' में ग्रामीण विकास की प्रकृति, प्रक्रिया, कार्यक्रमों एवं योजनाओं के साथ संरचनात्मक परिवर्तनों का विवेचन किया है।
13. जी.एस. नरवानी(2001) ने ''पंचायत प्रशासन क्या और कैसे?'' नामक पुस्तक में पंचायती राज का ढाँचा, वार्ड, सभा, ग्राम सभा, वार्ड पंचों के कर्तव्य और अधिकारों के बारे में विस्तृत चर्चा की है। ग्राम सभा–व्यवस्था और कार्य, गठन और बैठकें मानदेय एवं भत्ते, आय के साधन, शक्तियाँ, सरपंच की भूमिका, ग्राम सेवक के दायित्व तथा जनप्रतिनिधियों और लोकसेवकों में समन्वय जैसे बिन्दुओं का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। सूचना का अधिकार, निर्माण कार्यो को करवाने के तरीके, विकास योजनाएँ आदि विषयों का उल्लेख किया है।
14. देवेन्द्र उपाध्याय ने ''पंचायतीराज व्यवस्था (2001)'' नामक पुस्तक में बलवंत राय मेहता समिति की रिपोर्ट, अशोक मेहता, जी.वी.के.राव., एल.एम.सिंघवी की रिपोर्ट की विस्तार से चर्चा की है। पंचायती राज प्रणाली में नई पहल, लोगों का अधिकार, वैकल्पिक दृष्टिकोण संविधान संशोधन विधेयक, लोकतंत्र का आधार, नियोजन और प्रगति में जनभागीदारी आदि पर प्रकाश डाला गया है।

15. शमशेर सिंह मलिक(2002) ने अपनी पुस्तक, ''द न्यू पंचायती राज''में हरियाणा में पंचायतीराज की संगठनात्मक संरचना, पंचायती राज जनप्रतिनिधियों की सामाजिक–आर्थिक तथा राजनीतिक पृष्ठभूमि, महिला सशक्तिकरण और पंचायती राज में कमजोर वर्गो, नौकरशाही और पंचायती राज, पंचायतीराज के संसाधन और ग्रामीण विकास तथा पंचायती राज के उद्देश्यों की उपलब्धियों के बारे में उत्तरदाताओं कें नजरिये पर प्रकाश डाला है।
16. एम.पी.दुबे,मुन्नी पडालिया ने अपनी पुस्तक ''डेमोक्रेटिक डिसेन्ट्रलाइजेशन एण्ड पंचायतीराज इन इण्डिया(2002)'' में प्रजातंत्र व विकेन्द्रीकरण का उल्लेख करते हुए पंचायतीराज संस्थाओं का भी उल्लेख किया है। प्रजातंत्र मुख्यतः एक विकेन्द्रीकृत व्यवस्था हैं। केन्द्रीकृत शासन चाहे वह कितना ही सक्षम है। प्रजातंत्र की मूल धारणा का पूर्ण पालन नहीं करता, जो कि नागरिकों के शासन में निहित है। भारत जैसे विशाल देश में पंचायतीराज संस्थाओं द्वारा प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण प्रजातंत्र को जीवित करने की एक विधि है। 73वां संविधान संशोधन पंचायतीराज संस्थाओं के विकास के लिए एक ऐतिहासिक कदम है और इसे कार्यरूप में लाने के लिए नागरिकों को इसकी जानकारी होना आवश्यक है।
17. डी.सी. पंत ने अपनी पुस्तक ''भारत में ग्रामीण विकास(2002)'' में भारत में ग्रामीण विकास तथा भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। इसमें ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया गया है। ग्रामीण विकास का इतिहास, अर्थ एवं महत्व, ग्रामीण विकास की समस्याऐं, उनकी पहचान, ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का समग्र अध्ययन एवं विश्लेषण इस पुस्तक में किया गया है। इसके अलावा ग्रामीण विकास में सहकारिता तथा लघु एवं कुटीर उद्योगों की भूमिका, सामूदायिक विकास कार्यक्रम, पंचायत प्रणाली में ग्राम पंचायतों का महत्व तथा पंचायत राज प्रणाली की कमियों को बताते हुए पंचायत व्यवस्था में सुधार हेतु सुझावों को इस पुस्तक में बताया गया है।
18. जार्ज मैथ्यू ने अपनी पुस्तक ''भारत में पंचायतीराज (परिप्रेक्ष्य और अनुभव) (2003)'' को दो भागों में बांटा है जिसके प्रथम भाग में परिप्रेक्ष्य को लिया गया है। इस भाग में लेखक ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, राज्य तंत्र का पुनर्गठन, गणराज्य और लघुराज्य, जनसंख्या स्थिरता के लिए जन सत्ता, ग्राम सभा और सामाजिक अंकेक्षण, विकेन्द्रीकरण सरकार और स्वयं सेवी संस्थाएँ मानवाधिकार, खाद्य सुरक्षा, मीडिया एवं भविष्य के प्रश्नों पर प्रकाश डाला है। पुस्तक के द्वितीय भाग में अनुभव को सम्मिलित किया गया है जिसमें गुजरात, महाराष्ट्र, ग्राम सेवक राज, कश्मीर एवं पंचायतीराज के दुश्मनों को उजागर किया गया है।
19. डॉ.आर.पी.जोशी एवं डॉ. रूपा मंगलानी(संपादक) ने ''भारत में पंचायतीराज(2003)'' पुस्तक में कुल 22 अध्यायों को सम्मिलित करते हुए पंचायतीराज पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है।इसमें डॉ.रूपा मंगवानी ने पंचायतीराज की विकास यात्रा पर, जी.एस.नरवानी ने संगठनात्मक एवं कार्यात्मक पहलू, डॉ. बेला भनोत ने महिलाओं की सहभागिता, डॉ. एच.वी. त्रिवेदी ने विकेन्द्रित आर्थिक विकास : दशा और दिशा, प्रो. पी.सी. माथुर ने राजनैतिक दलों की भूमिका, अंजना अविनाश ने ग्रामीण विकास, प्रो. बी.एम. शर्मा ने जिला सरकार–अवधारणा एवं स्वरूप, मिठ्ठालाल मेहता ने पारदर्शी प्रशासन एवं प्रो. जोशी व डॉ. रूपा मंगलानी ने मूल प्रश्न एवं प्रवृत्तियों का विस्तार से वर्णन किया है।[7]
20. गिरवर सिंह राठौड़(2004) ने ''भारत में पंचायती राज'' नामक पुस्तक में पंचायती राज की ऐतिहासिक विकास यात्रा को प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान तक का वर्णन प्रस्तुत किया है। इसमें पंचायती राज की अवधारणा, स्वरूप, संगठन एवं कार्य व ग्राम सभा एवं वार्ड सभाओं का उल्लेख सम्मिलित किया गया है। पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था के प्रत्येक स्तर को 73 वें संविधान संशोधन से पूर्व एवं पश्चात् की स्थिति से अवगत कराया गया है।
21. डॉ. सुरेन्द्र कटारिया एवं योगेश कानवा ने ''भारत में आर्थिक नियोजन एवं निर्धनता उन्मूलन(2006)'' नामक पुस्तक में बताया है कि निर्धनता जैसी सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक समस्या का समाधान मात्र आर्थिक नियोजन से संभव नहीं है

बल्कि इसके सामाजिक, प्राकृतिक तथा भौगोलिक आयाम भी विश्लेषण के योग्य है। पुस्तक में आर्थिक नियोजन प्रक्रिया, योजना आयोग पंचवर्षीय योजनाओं के प्रयासों सहित निर्धनता उन्मूलन हेतु विशिष्ट विकास कार्यक्रमों तथा स्वयं सहायता समूहों पर विशिष्ट सामग्री प्रस्तुत की गई है।

22. डॉ. भीम सिंह दहिया ने अपनी पुस्तक ''हरियाणा में सत्ता की राजनीति–जाति और धन का खेल(2006)'' में अब तक हरियाणा में सत्ता की राजनीति के उतार–चढ़ावों को क्रमसार प्रस्तुत करते हुए जाति और धन का इस्तेमाल करके लोकतांत्रिक ढाँचे को लीलती सत्ता की मूल्यहीन राजनीति का चरित्र उजागर किया है। हरियाणा में सत्ता की कुर्सी हथियाने के लिए किए गए राजनीतिक षड्यंत्रों, कुचक्रों व धोखेबाजी को दृष्टिपटल पर लाने का प्रयास किया गया है।
23. राजेन्द्र कुमारने ''रूरल एण्ड अरबन गर्वमेंट 2008'' में ग्राम सभा को प्रारम्भिक ग्रामीण सभा कहा है जिसमें सभी लोग सम्मिलित होते है न कि उनके प्रतिनिधि। इन्होंने ग्राम सभा को ग्रामीण लोकतंत्र की संरचना का आधार स्तर बताया है जो सहभागी लोकतंत्र का संस्थानिक रूप है। बलवन्तराय मेहता समिति की सिफारिशों में ग्रामीण स्थानीय सरकार में केवल त्रिस्तरीय संरचना की सिफारिश की थी जिसमें ग्राम सभा को संथानिक मान्यता देने की बात कही गई है। इस पुस्तक में ग्राम सभा को वर्तमान पंचायतीराज से भी पुराना बताया गया है और उत्तरप्रदेश, बिहार में 1947 से कार्यरत् तथा पंजाब, हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश में 1952 से कार्यरत बताया है। वर्तमान में पंचायतीराज वाले सभी राज्यों में इसे अपनाया जा रहा है। ग्रामीण स्थानीय सरकार के संदर्भ में पंचायतीराज वाले सभी राज्यों में इसे अपनाया जा रहा है। ग्रामीण स्थानीय सरकार के संदर्भ में लेखक ने पंचायतों के कार्यो, राज्य स्थानीय सरकार, ऐतिहासिक विकास, 73, वें संविधान, पंचायतीराज संस्थाओं एवं अभिकरण तंत्र पर नियंत्रण को प्रस्तुत किया है।
24. भक्तापडा सिन्हा राय ने ''पंचायतीराज एण्ड रूरल डवलमेंट(ए केस स्टेडी ऑफ वेस्ट बंगाल 2008)'' में पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग की संगठनात्मक संरचना को प्रस्तुत किया है। इसमें मुख्यालय स्थापना, पंचायतीराज संस्थाओं की स्थापना शाखा, खण्ड स्थापना इकाई, पंचायतीराज संस्थान नीति इकाई बजट इकाई, गरीबी निवारण इकाई, ग्रामीण अधोसंरचना विकास इकाई, स्वरोजगार एवं महिला विकास इकाई, सामाजिक विकास इकाई, लोकस्वास्थ्य इकाई, प्रशिक्षण एवं गैर विकास इकाई, सामाजिक विकास इकाई, लोकस्वास्थ्य इकाई, प्रशिक्षण एवं गैर सरकारी संगठन इकाई, लेखा एवं अंकेक्षण इकाई को विस्तार से बताया है। विभाग में मानव संसाधन, निदेशालय का संगठन, स्वीकृत एवं वास्तविक कार्यरत पदों की स्थिति, खण्ड विकास कार्यालयों संयुक्त खण्ड विकास अधिकारी (Joint BDOs)महिला विकास अधिकारी (WDOs)के नये पदों का सृजन, राज्य किया गया।
25. पंचायत और ग्रामीण विकास संस्थान समिति, जिला परिषद स्थापना शाखाओं, जिला परिषद के कार्यो वित्तीय प्रबन्धन, पंचायतों की क्षमता संवर्द्धन के बारे में चर्चा की गई है। विभाग द्वारा संचालित/क्रियान्वित कार्यक्रमों, बजट एवं पंचायत वित्त, प्रशिक्षण, ई–शासन की पहल, जुड़े जुए संस्थानों के कार्य, पंचायतों में भ्रष्टाचार तथा योजना आयोग के अवलोकन पर प्रकाश डाला गया है। योजना आयोग के अवलोकनों में बताया गया है। कि पश्चिमी बंगाल में भारत सरकार द्वारा ''Backward region grant fund''के नाम पर 200 करोड़ रूपये शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, शिशु मृत्यु दर को रोकने, महिला शिक्षा और नरेगा के लिए उपलब्ध करवाये परन्तु 30 जिलों में से राज्य के 36 जिले पिछड़े हुए हैं अर्थात् 94.73 प्रतिशत जिले पिछड़े हुए है जबकि देश के कुल 604 जिलों में से 251 (42 प्रतिशत) राज्य के जिले पिछड़े हुए है।[9]
26. डॉ. वीरेन्द्र शर्मा एवं डॉ ऋचा शर्मा ने ''पंचायतीराज (2008)'' पुस्तक में पंचायत की अवधारणा, ग्रामीण स्थानीय स्वशासन, विकेन्द्रीयकरण, ग्रामसभा, विकास कार्य ग्रामीण विद्युतीकरण, पंचायतीराज का क्रियान्वयन, ग्राम स्तरीय प्रमुख समस्याएँ, वित्त प्रशिक्षण, महिला नेतृत्व, सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि, ग्रामीण विकास, विभिन्न समितियाँ, 73वां संविधान संशोधन, कृषि

अर्थव्यवस्था और लघु एवं कुटीर उद्योग, विकास कार्यक्रमों की व्यवस्था एवं आयोजन का विस्तार से उल्लेख करते हुए मध्यप्रदेश पंचायतीराज अधिनियिम पर प्रकाश डाला है।

27. बी.सी. नरूला ने अपनी पुस्तक ''पंचायतीराज व्यवस्था(2009) में पंचायतीराज संस्थाओं का गठन, कार्य तथा अधिकार, स्थानीय विभाग एवं उनके दायित्व, संवैधानिक संशोधन, स्थानीय स्वशासन के समक्ष चुनौतियाँ, विकास कार्यक्रम एवं नियोज, ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्थानीय सामाजिक प्रशासन आदि पर विस्तार से चर्चा की है।
28. अमित पूरोहित ने ''पंचायतीराज व्यवस्था (2010)'' नामक पुस्तक में पंचायतीराज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, 73वे संविधान संशोधन की विशेषताऐं, 11वीं अनुसूची, पंचायतीराज संस्थाएँ, चुनाव प्रक्रिया, प्रतिनिधियों के कार्य, अधिकार एवं कर्तव्य, आय के साधन, पीसा एक्ट, ग्राम न्यायालय, आर्थिक शक्ति, पंच प्रशिक्षण, ई–गवर्नेस, महात्मा गांधी ग्रामीण रोजगार गारण्टी एक्ट आदि का उल्लेख किया है।
29. डॉ. जनक सिंह मीणा(2010) में ''ग्रामीण विकास के विविध आयाम'' पुस्तक में भारतीय लोकतंत्र में विकास का सार्वभौमिक स्वरूप पूर्णरूपेण ग्रामीण परिवेश पर न केवल पल्लवित होता है अपितु निर्भर करता है, अतः इस पुस्तक में लेखक ने ग्रामीण विकास की ऐतिहासिक यात्रा से लेकर विकास कार्यक्रमों, प्रशासनिक तंत्र, कार्यक्रम क्रियान्वयन, पर्यवेक्षण, अंकेक्षण मूल्यांकन एवं नीति निर्माण की सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक विवेचन करने का प्रयास किया है। यह अध्ययन अनुभवपरक अध्ययन पर आधारित है।
30. डॉ. सूरत सिंह एवं प्रो. मोहिन्दर सिंह ने कुटीर उद्योग का '' नामक सम्पादित पुस्तक को चार भागों में कुल 39 अध्यायों में विभाजित किया है जिसमें 42 लेखकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा इसके प्रथम भाग में ग्रामीण विकास के विषय पर प्रकाश डाला गया है, द्वितीय भाग में ग्रामीण विकास की अवधारणाओं एवं उपागमों का विस्तृत उल्लेख किया गया है। पुस्तक का तृतीय भाग संरचनात्मक एवं कार्यात्मक पहलुओं पर आधारित है तथा अन्तिम भाग में ग्रामीण विकास की विकेन्द्रीकृत शासन व्यवस्था को रेखांकित किया गया है।
31. श्री राजेन्द्र शर्मा ने अपने लेख 'महात्मा गांधी नरेगा–पारदर्शिता और उत्तरदायित्व (जुलाई–अगस्त 2010)' में महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना के परिप्रेक्ष्य में सूचना के अधिकार के माध्यम से पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व लाने पर बल दिया है। ग्राम स्तरीय निगरानी एवं सतर्कता समिति, सामाजिक अंकेक्षण, शिकायतों का निवारण, स्थायी समिति आदि बिन्दुओं को लेखक ने बताने का प्रयास किया है।
32. डॉ. अमर सिंह राठौर ने अपने लेख 'उच्च आर्थिक विकास : सम्पन्नता का आधार में संसाधनों की सीमितता और उनके सही उपयोग करने पर बल दिया है। अपने लेख में मुख्यमंत्री श्री अशोक गेहलोत के राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक में दिये गये विचारों को रेखांकित किया है–केन्द्र सरकार के पुख्ता प्रबन्धन और प्रभावी नीतियों के कारण राज्य ने भी वर्तमान वैश्विक आर्थिक गिरावट की चुनौतियों को स्वीकार कर उनका सामना करने में सफलता हासिल की है। 'इन्होंने संवेदनशील, पारदर्शी उत्तरदायी प्रशासन प्रबन्धन, कमजोर वर्गो, शिक्षा एवं रोजगार, कृषि व्यवसाय, जल नीति, वन नीति, आदि को विस्तार से समझाया है।
33. डॉ. अमर सिंह राठौड़ ने अपने लेख ' कुटीर उद्योग से महिलाओं को सही से इसकी जड़ो को बहुत गहरी एवं मजबूत बताया है तथा वास्तविक लोकतंत्र की स्थापना के लिए शासन को आधार स्तर तक आवश्यक बताया है। इन्होंने 73वें संविधान संशोधन को सशक्तिकरण की दिशा में उठाया गया कदम बताते हुए पंचायतीराज को सौपें गये विषयों की चर्चा की है।

34. प्रो.पी.सी. माथुर ने अपने लेख' कुटीर उद्योग से महिलाओं' में पंचायतीराज के स्वतंत्रता से लेकर वर्तमान तक की उपलब्धियों पर दृष्टिनपात करते हुए राजस्थान में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की सराहना की है। इन्होंने ग्राम सभा की संवैधानिकता, नरेगा, योजना, पंचायतीराज की त्रिस्तरीय व्यवस्था पर प्रकाश डाला है।
35. डॉ. अलका कटियार ने कुटीर उद्योग से महिलाओं को विश्व बैंक के अनुसार–ग्रामीण विकास का अर्थ ऐसी व्यूह रचना से है जिसे निम्न आय वर्ग के लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के उत्पन्न के लिये डिजाइन किया गया है जिसके अंतर्गत कृषि विकास, ग्रामीण गृह निर्माण, ग्रामीण योजना, स्वास्थ्य, शिक्षा संचार, सामाजिक–आर्थिक ढाँचे में परिवर्तन आदि बातें सम्मिलित है। निम्न आय वर्ग में गाँव के छोटे किसान, शिल्पी, दस्तकार, भूमिहीन, मजदूर और गरीब लोग आते है।

शोध प्रविधि –

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जयपुर जिले में महिलाओं को कुटीर उद्योग के माध्यम से आगे बढ़ाने के लिए राज्य सरकार, व केन्द्र सरकार द्वारा कई सारी योजनाओं का संचालन किया गया हैं। इन योजनाओं का लाभ महिला सशक्तिकरण के माध्यम से उनके आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों में आगे बढ़ाने के लिए संचालित की जाती हैं। केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा महिला सशक्तिकरण के नाम से एक अलग ही विभाग का गठन किया गया हैं, जो कि सिर्फ महिलाओं को सशक्त करने के लिए, उनके ऊपर होने वाले अपराधों, उनको शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ाने के लिए मदद करना, समाज के प्रति जागरूकता लाना। महिलाओं को समय–समय पर उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार, छोटे–छोटे कुटीर उद्योगों का निर्माण करना, उन कुटीर उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराना व उस कच्चे माल का उत्पादन करना व सही दाम बाजार में उपलब्ध कराना आदि महिलाओं को जागरूकता लाना, उनकी आय में वृद्धि करना आदि बातों को ध्यान में रखकर प्रस्तुत शोध को पूर्ण किया जायेगा।

प्रस्तुत शोध अध्ययन महिला सशक्तिकरण में उद्दीमता की भूमिका का अध्ययन (जयपुर में कुटीर उद्योग के संदर्भ में) में कार्य को ध्यान में रखकर शोध के निम्न उद्देश्य को रखा गया हैं। जिसमें अध्ययन का उद्देश्य निम्नानुसार हैं –

(1) महिलाओं का शैक्षिक स्तर, सामाजिक संरचना, आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
(2) महिलाओं को लघु एवं कुटीर उद्योग के माध्यम से उपलब्ध कराये गये शासन स्तर की योजनाओं का अध्ययन करना।
(3) महिला सशक्तिकरण विभाग के माध्यम से किये गये सहयोग का अध्ययन करना।
(4) लघु एवं कुटीर उद्योग के माध्यम से महिलाओं में जागरूकता आ रही हैं या नहीं इसका अध्ययन करना।
(5) जयपुर जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों के माध्यम से व्यक्तिगत जीवन में लाये बदलाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना–

अनुसंधान के लिये परिकल्पना का निर्धारण करना होता हैं। परिकल्पना समस्या के रूप में मनःपटल पर उठने वाले प्रश्न होते है जिसके आधार पर निष्कर्षो को प्राप्त किया जाता हैं। अतः शोध अध्ययन हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाओं का निर्धारिण किया गया हैं–

01 आधुनिक समाज में महिलाओं के द्वारा उनकी आर्थिक, सामाजिक व शैक्षणिक स्थिति को सुधारने के लिए किये गये नवीन लघु एवं कुटीर उद्योगों में क्या परिवर्तन आया हैं।
02 लघु एवं कुटीर उद्योग के माध्यम से इनकी सामाजिक स्थिति में जागरूकता आ रही हैं या नहीं इसका अध्ययन करना।
03 महिलाओं को कुटीर उद्योग स्थापित करने के लिए शासन द्वारा विभिन्न कल्याणकारी योजनायें इनकी समस्याओं को प्रभावित करती हैं।
04 जयपुर जिले में विभिन्न समाजों में महिलाओं को सशक्त करने के लिए स्थानीय सरकार द्वारा समय–समय पर किये जाने

वाली योजनाओं का उपयोग महिलाओं तक पहुँच पा रहा हैं या नहीं, इसका अवलोकन करना।

05 जयपुर जिले में महिलाओं के द्वारा स्थापित लघु एवं कुटीर उद्योगों के द्वारा शासकीय योजनाओं का प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि –

प्रस्तुत शोध अध्ययन महिला सशक्तिकरण में उद्दीमता की भूमिका का अध्ययन (जयपुर में कुटीर उद्योग के संदर्भ में) जयपुर जिले में निवासरत 300 परिवारों की महिलाओं को प्रश्नावली के माध्यम से उनके पास जाकर उनसे साक्षात्कार के माध्यम से प्रश्न पुछे जायेगे और उनके प्रश्नों को भर कर प्रस्तुत शोध अध्ययन में सम्मिलित किया जाएगा।

तथ्यों का संकलन–

अध्ययन हेतु तथ्यों का संकलन करने के लिए प्राथमिक तथा द्वितीयक स्त्रोंतो का उपयोग किया गया है। जिसमें प्राथमिक तथ्यों का संकलन प्रत्यक्ष रूप से साक्षात्कार व अनुसूची के माध्यम से जानकारी एकत्र कर किया गया हैं।

द्वितीयक तथ्यों के संकलन के लिये विभिन्न स्त्रोतों एवं माध्यमों का उपयोग किया गया है। जिसमें पूर्व शोध अध्ययन, शोध आलेख, जर्नल्स, समाचार पत्र वार्षिक रिपोर्ट इत्यादि को सम्मिलित किया गया हैं।

शोध की उपयोगिता –

वर्तमान शोध जयपुर जिले में जयपुर शहर के सबसे पिछड़ी महिलाओं से जुड़ा है, पर अध्ययन केन्द्रित किया गया है जिससे अध्ययन की प्रासंगिकता बढ़ी हैं। निकाले गये निष्कर्ष से महिलाओं की सशक्तिकरण में उद्दीमता की भूमिका का अध्ययन और वर्तमान समस्या और कारणों को जानने में सहायता मिलेगी। समस्याओं के निराकरण के लिये सुझाव प्रस्तुत किये जाएंगे।

अध्ययन क्षेत्र –

पर्यटन के लिहाज से जयपुर भारत के सबसे महत्वपूर्ण शहरों में से हैं। राजस्थान में स्थित इस शहर को महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय ने 18 नवम्बर 1727 को स्थापित किया था। जयपुर प्राकृतिक सौंदर्य के साथ महान इतिहास की भी धरती हैं। इसका पर्यटन उद्योग बहुत ही समृद्ध हैं। गुलाबी शहर के नाम से मशहूर यह शहर राजस्थान की राजधानी भी हैं। हवाई, सड़क और रेल के मजबूत नेटवर्क के चलते यह दुनिया भर के कई हिस्सों से अच्छी तरह से जुड़ा हुआ हैं।

जयपुर के महल देशी और विदेशी सैलानियों के पसंदीदा स्थान है। जयपुर के कई पुराने और उपेक्षित महल और किले अब हेरिटेज होटल में तब्दील किए जा चुके है। जयपुर के सेवा क्षेत्र की प्रतिष्ठा उसके पर्यटन, रियल स्टेट, बीमा और होटल उद्योग से हैं।

जयपुर राजस्थान में शिक्षा का केन्द्र हैं। इस शहर में प्रतिष्ठित कॉलेज हैं जो दुनिया भर के छात्रों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। व्यवसायिक डिग्री के अलावा जयपुर में ऐसे कई कॉलेज हैं जो आर्ट्स, कॉमर्स और विज्ञान में डिग्री मुहैया कराते हैं। जयपुर के कई कॉलेज अपने शैक्षिक इतिहास और सुविधाओं के लिऐ जाने जाते हैं। कुछ प्रमुख कॉलेजों में सत्य साई महिला कॉलेज, श्री खंडेलवाल वैश्य कॉलेज, वैदिक कन्या कॉलेज, शासकीय महाराजा आचार्य संस्कृत कॉलेज, बियानी कॉलेज, भारत लॉ कॉलेज आदि अन्य हैं।[11]

जयपुर का सड़क नेटवर्क सबसे अच्छी तरह से सहेजा गया सड़क नेटवर्क है। भारत के सभी प्रमुख शहरों और कस्बों से इस शहर तक आसानी से पहुचा जा सकता है। हवाई, सड़क और रेल के माध्यम से जयपुर उत्कृष्ट तौर पर सबसे जुड़ा हुआ है। इस शहर का रेल्वे स्टेशन और एयरपोर्ट राज्य में प्रवेश के प्रमुख केन्द्र है। जयपुर की यात्रा इसलिए भी और आसान हैं क्योंकि यह भारत का एक प्रमुख पर्यटन स्थल हैं।

जयपुर का भारत के सभी महानगरों और शहरों से शानदार हवाई संपर्क हैं। जयपुर एयरपोर्ट मुख्य शहर से 13 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। ज्यादातर घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय विमान सेवाएं जयपुर के लिए और जयपुर से उड़ाने भरती है। दिल्ली और मुंबई से जयपुर के लिए नियमित उड़ाने मिलती हैं। जयपुर से शारजाह और मस्कट के लिए नियमित रूप से अंतर्राष्ट्रीय उड़ाने उपलब्ध हैं।

जयपुर रेल्वे स्टेशन राजस्थान का मुख्य स्टेशन है। भारत के ज्यादातर शहर और कस्बे जयपुर से जुड़े हैं। बड़ी संख्या में रेलें रोजाना जयपुर से और जयपुर से लिए चलती हैं जयपुर की कुछ महत्वपूर्ण रेल हैं। शताब्दी, मंडारे एक्सप्रेस, जम्मू तवी एक्सप्रेस, आश्रम एक्सप्रेस, अहमदाबाद मेल, इबादत एक्सप्रेस आदि।

जयपुर गुलाबी शहर के नाम से मशहूर हैं जो कि पश्चिमी भारत के राजस्थान राज्य की राजधानी हैं। जयपुर जिले का कुल क्षेत्र 11,117 वर्ग किलोमीटर हैं जिसका औसत जनसंख्या घनत्व 470 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार जयपुर की आबादी 6626178 हैं। इसमें ग्रामीण और शहरी जनसंख्या बराबर हैं। जयपुर जिला राजस्थान के पूर्वी भाग में है। यह उत्तर की ओर से सीकर और हरियाणा राज्य के महेन्द्रगढ़ से घिरा हैं। इसके दक्षिण में टोंक जिला, पूर्व में सवाई माधोपुर और दौसा जिले हैं। राज्य की राजधानी होने के नाते जयपुर में विधान सभा भी हैं। इस जिले में 13 तहसील और उपतहसील हैं जिनके नाम जयपुर, चोमू, आमेर, सांगानेर, शाहपुर, बस्सी, चाकसू, मोजमाबाद, जामवा रामगढ़, फागी, फुलेरा, कोटपुतली, विराटनगर हैं, साथ ही यहां 13 पंचायत समितियां और 2369 गावं हैं।[12]

राजस्थान में होने के कारण जयपुर की जलवायु शुष्क हैं। गर्मियों में जयपुर का मौसम बहुत गर्म और सर्दियों में बहुत ठंडा रहता हैं। जयपुर में तीन मौसम प्रमुख हैं, गमी, सर्दी और मानसून। गर्मियां अक्सर अप्रैल से जुलाई अंत तक रहती हैं। गर्मियों में तापमान आमतौर पर 30 डिग्री से 45 डिग्री रहता है। मानसून जुलाई से आता है, पर आमतौर पर जून से शुरू हो जाता हैं। इस शहर में सालभर में 650 मिलीमीटर बरसात होती हैं। जयपुर का मानसून आमतौर पर भारी बरसात वाला होता हैं और इसमें लगातार बारिश के साथ गरज भी होती हैं। यहां घूमने आने का सबसे अच्छ समय सर्दियों का होता हैं। इस शहर में सर्दिया नवम्बर से शुरू हो जाती हैं। इस दौरान यहां का तापमान 15–18 डिग्री सेल्सियस के बीच रहता हैं। यहां की सर्दियां सुहावनी होती है और शीतलहर नहीं होती, ना ही चरम ठंड होती हैं। जयपुर के लिए उड़ाने सांगानेर हवाई अड्डे पर उतरती हैं। 2006 में सांगानेर एयरपोर्ट को अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे का दर्जा मिला था और यह भारत का 14वां अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा था। जयपुर के घरेलू हवाई अड्डे पर खाने पीने के कई स्थान, शॉपिंग सेंटर और मेडिकल सुविधा केन्द्र हैं। कई घरेलू उड़ाने नियमित रूप से जयपुर से उड़ती हैं। जयपुर से दिल्ली, मुंबई और अहमदाबाद के लिए लगभग हर दिन उड़ाने उपलब्ध हैं। जयपुर से कुछ लोकप्रिय उड़ानों में इंडियन एयरलाइंस, एयर–सहारा, स्पाइस जेट, एयर डेक्कन किंगफिशर एयरलाइंस, एलायंस एयर, गो एयर और जेट एयरवेज हैं।

जयपुर के शाही शहर में पूरे साल कई त्यौहार भरपूर उत्साह से मनाए जाते हैं। जयपुर में कई त्यौहार होते हैं। यह मेले और त्यौहार जयपुर की पहचान का अभिन्न हिस्सा हैं।[13]

जयपुर दिल्ली से 260 किलोमीटर और आगरा से 240 किलोमीटर हैं और यह ''गोल्डन टूरिस्ट सर्किट'' का हिस्सा है। इस शहर में दुनिया भर से हजारो सैलानी आकर्षण से खिंचे चले आते हैं। जयपुर तब अस्तित्व में आया जब महाराजा सवाई जय सिंह ने इस खूबसूरत शहर की स्थापना 1727 में की। जयपुर में कई शाही राजवंशों का उदय हुआ और यह उस समय का महत्वपूर्ण सांस्कृतिक केन्द्र भी रहा।

जयपुर राजस्थान के पूर्वी भाग में स्थित हैं। जयपुर अपनी सीमा उत्तर की ओर से सीकर और अलवर से साझा करता हैं और इसके दक्षिण में टोंक, अलवर और सवाई माधोपुर और पूर्व में दौसा और भरतपुर और पश्चिम में नागौर, सीकर और अजमेर हैं। बुनियादी ढांचा जयपुर हवाई, सड़क और रेल के मजबूत नेटवर्क के चलते भारत के कई हिस्सों से अच्छी तरह जुड़ा हुआ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1) जैन बी.के. भारत में आर्थिक नियोजन विकास एवं आर्थिक उदारीकरण में लघु एवं कुटीर उद्योग के संदर्भ में 2000
2) संजय सिंह, दलित और शिक्षा'' ओमेगा पब्लि. नई दिल्ली. पृष्ठ 2
3) चन्द्र राकेश : आर्टिकल महिला परिस्थिति और समजा पृ 84 अगस्त 1994
4) शर्मा ब्रह्मदेव, आदिवासी स्वशासन प्रकाशन संस्थान नईदिल्ली
5) श्रीवास्तव आर.एन., सामाजिक अनुसंधान तथा शोध प्रविधि म.प्र. हिन्दीग्रंथ अकादमी, भोपाल पृ.स. 261, 63
6) बघेल डी.एस. एवं किरण : अनुसंधान पद्धतिशास्त्र कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल पृ. 510
7) चौबे रमेश : सामाजिक अनुसंधान तथा शोध प्रविधि हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृ.स. 232
8) सिंह एस.डी. : वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूलतत्व कमल प्रकाशन दिल्ली पृ. सं 28
9) श्री निवास एम.एन. : सोशल चैन्ज इन मार्डन इण्डिया
10) किशन राव एस.के. : इनरजिंग ट्रायबल इमेज रावत पब्लिशर्स, जयपुर पृ. 188
11) सच्चिदानंद :सेल्फ गवर्नेस कार ट्राइबल (वाल्यूम– 1–6) एन.आई. आर. डी. हेदराबाद पृ. 16, 23
12) रेब्बा प्रगाड रवि : इमरजिंग पेटर्न ऑफ लीडरशीप इन ट्रायल इण्डिया मानक पब्लिकेशन नईदिल्ली पृ.स. 12
13) जनसंख्या के अंतिम आँकड़े : भारत की जनगणना 2011 निर्देशक जनगणना कार्य निदेशालय जयपुर, राजस्थान
14) जिला सांख्यिकीय पुस्तिका : जिला कार्यालय, जयपुर राजस्थान

INTERNET SOURCES:

7% -
http://spc.uk.gov.in/files/Evaluation%20report/Anusuchat_jati_Bahulaya_khatra_Avasthapana_suvida_ka_vikas_report.pdf